अनुबोधन, खण्ड 2, अंक 2, अप्रैल–जून 2026, पृष्ठ 256–258
जर्नल वेबसाइटः
https://anubodhan.org
ISSN: 3049-4184 (प्रिन्ट) 3108-1185 (ऑनलाइन)
https://doi.org/10.65885/anubodhan.v2n2.2026.086

श्री अरविन्द के दर्शन में सृष्टि का आविर्भाव

डॉ० सन्तोष कुमार *

प्राप्तिः 20 जून 2026 / स्वीकृतः 30 जून 2026 / प्रकाशित: 30 जून 2026
Copyright © 2026 Author(s). Published by Siri Research Foundation. This is an open access article distributed under the Creative Commons Attribution International License (CC BY 4.0).

सारांश
इस शोध–पत्र का मुख्य उद्देश्य श्री अरविन्द के प्रसिद्ध ग्रंथ 'द लाइफ डिवाइन' में वर्णित सृष्टि प्रक्रिया का विश्लेषण करना है। यह पत्र स्पष्ट करेगा कि कैसे सच्चिदानन्द का अवतरण जड़ पदार्थ में होता है और कैसे चेतना क्रमिक रूप से प्राण, मन और अन्ततः अतिमानस के माध्यम से वापस दिव्यता की ओर अग्रसर होती है।
बीज–शब्दः सच्चिदानन्द, आरोहण, अवरोहण, अवतरण, अतिमानस, दिव्यता, चेतना।

भारतीय दार्शनिक परम्परा में सृष्टि का आविर्भाव को लेकर अनेक दृष्टिकोण रहे हैं, लेकिन महर्षि अरविन्द का दर्शन एक अद्वितीय और समग्र दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। उन्के अनुसार सृष्टि कोई आकस्मिक घटना अथवा केवल माया (भ्रम) नहीं है बल्कि एक दिव्य लीला है। इस प्रक्रिया में सर्वोच्च सत्ता (सच्चिदानन्द) अपनी अनन्त चेतना को सघन (Dense) करते हुए जड़ पदार्थ में विलीन हो जाती है।

श्री अरविन्द दर्शन में 'अतिमानस' सृष्टि की गत्यात्मकता का मूल आधारभूत तत्व है और परमतत्व सच्चिदानन्द का सर्जनात्मक पक्ष है। सृष्टि विकास की सारी प्रक्रिया अतिमानस के माध्यम से संभव होती है। अतिमानस ही सामान्य धार्मिक भाषा का ईश्वर है, जो देश एवं काल से अतीत होता हुआ भी उसमें सन्निहित है। वह सच्चिदानन्द से सदैव अभिन्न होता हुआ सृष्टि प्रक्रिया को संभव बनाता है। प्रश्न है कि जो कालातीत है वह काल में कैसे भासित होता है? जो देश से परे है, वह देश में कैसे प्रकट होता है? असीम के द्वारा ससीम देश–काल की सृष्टि कैसे सम्भव है? उक्त समस्या का सामाधान प्रस्तुत करते हुये श्रीअरविन्द कहते है कि परमतत्व सच्चिदानन्द की एक अद्भुत शक्ति है, जिसे हम अतिमानस कहते हैं। यही अतिमानस शक्ति ही असीम से ससीम का सर्जन करती है। वे कहते हैं कि ''इसी अतिमानस को वैदिक ऋषियों ने 'माया कहा है।''[1] 'वेदांत में माया को ब्रहम की शक्ति बताकर ब्रहम से सदैव अभिन्न बताया गया है। वह सृष्टि प्रक्रिया में ब्रहम की सहायिका है। श्री अरविन्द दर्शन में अतिमानस जो सच्चिदानन्द से सदैव अपृथक रहता है, वह सृष्टि प्रक्रिया को आगे बढ़ाता है।

वह विकास के द्वारा मानव मात्र को उसके दिव्य लक्ष्य की ओर निरन्तर आगे बढ़ने को प्रेरित कर रहा है। विकास की प्रक्रिया जो श्रीअरविन्द की दृष्टि में, परमसत्ता के आत्म–संकुचन पर आधारित है, आत्माभिव्यक्ति के लक्ष्य की ओर निरन्तर बढ़ रही है। सूक्ष्मतम् परमाणु में भी आध्यात्मिक प्रेरणा रहती है। इसी आध्यात्मिक प्रेरणा के कारण निश्चेतन जड़ से जीवन और जीवन से मनस का विकास हुआ।

* असिस्टेन्ट प्रोफेसर (दर्शनशास्त्र), द्रौपदी देवी विन्ध्याचल महाविद्यालय, सिंहोरवाँ अहिरौली, गोरखपुर
✉ डॉ० सन्तोष कुमार, E-mail: santoshmauryagorakhpur@gmail.com

वर्तमान मानसिक स्तर जिसमें से मनुष्य जाति इस समय गुजर रही है, वह विकास का अन्तिम पड़ाव नहीं हो सकता। विश्व की उर्ध्वगामी गति का अन्तिम पड़ाव कहीं और है। केवल दिव्यलोक का प्रकाश ही मनुष्य की इस आन्तरिक प्रेरणा को परितुष्ट कर सकता है और यह विकास मानवीय चेतना के उन्नत आयामों के माध्यम से होना है। अस्तु विकास के माध्यम से सारी मानव जाति को अपने उस दिव्य पड़ाव की ओर आगे बढ़ना है।

विकासवाद श्रीअरविन्द दर्शन का मूल सिद्धान्त है। श्रीअरविन्द का विकासवादी सिद्धान्त अपने आन्तरिक लक्ष्य एवं स्वरूप में पूर्णतः आध्यात्मिक है, यधपि यह सत्य है कि विकास की यह अवधारणा नवीन नहीं है, तथापि अरविन्द के दर्शन में इस सिद्धान्त ने जो पूर्णता एवं जीवन्नता पाई है, वह अनयत्र देखने को नही मिलती। श्रीअरविन्द के विकासवादी सिद्धान्त के तहत जीव की निम्न प्रकृति में कुछ भी ऐसा नहीं है, जो पूर्णतः विनष्ट होता हो, अपितु वह एक रूपान्तरण प्राप्त करता है।

श्रीअरविन्द के दर्शन में विकास प्रतिविकास का परिणाम है। यदि सच्चिदानन्द का प्रतिविकास जड़ तत्व में न हुआ होता तो जड़तत्व का विकास सच्चिदानन्द के रूप में संभव न हो पाता। अतः विकास की प्रक्रिया प्रतिविकास के कारण ही संभव होती है। मनुष्य पूर्णता तथा आत्माज्ञान की आकांक्षा केवल इसलिए करता है कि आध्यात्मतत्व ने अपने को अज्ञान में निमज्जित कर रखा है। "The ascant to the Divine life is the human journey, the work of works, the acceptable sacrifice."[2] अर्थात् दिव्य जीवन में आरोहण ही मानव की यात्रा है, सभी कार्यों में मुख्य कार्य है, ब्रहणीय बलिदान है। अस्तु अवरोहण को अध्यात्मतत्व का आत्मगोपन कहा जाता है, जबकि आरोहण या विकास को आत्मप्रकाशन कहा जाता है। आत्मा का पहले जड़ तत्व में अवरोहण होता है तत्पश्चात जड़ से सच्चिदानन्द की ओर आरोहण होता है। यानी प्रतिविकास सच्चिदानन्द का जड़ की ओर प्रवृत्ति है और विकास सच्चिदानन्द का जड़तत्व से निवृत्ति है। प्रतिविकास सच्चिदानन्द का तिरोभाव है और विकास सच्चिदानन्द का आत्मस्वीकार है। इस प्रकार प्रतिविकास और विकास के माध्यम से हमारे दिव्य जीवन की अभिव्यक्ति होती है। एक ही परमतत्व सच्चिदानन्द प्रतिविकास और विकास के माध्यम से अपने को अभिव्यक्ति करता है।

जब मूल सत् अतिमानस से नीचे की ओर अवरोहण करने लगता है, जब उसमें परिमितता आने लगती है। कहने का अर्थ यह है कि सत्ता के अवरोहण की क्रिया में कई एक स्तर होते हैं। अर्थात विभिन्न दशाओं से गुजर कर सत्ता धीरे–धीरे अपने को आच्छादित कर लेती है, उसी प्रकार आरोहण यात्रा में भी कई स्तरों से होते हुए विकास क्रम आगे बढ़ता है। इस बात की चर्चा पर्याप्त रूपों में ऊपर प्रयार्प्त की जा चुकी है। श्रीअरविन्द उन सभी स्तरों को निम्न प्रकार बताते हैं– अवरोहण के स्तर का क्रम है, ''सत्, चित् शक्ति, आनन्द, अतिमानस, मनस, चैत्यसत्ता, प्राण एवं जड़। आरोहण क्रम ठीक इसके विपरित है।''[3] श्रीअरविन्द मनस और अतिमानस के बीच कई गौण स्तरों को भी वर्णित करते हैं। वे निम्नवत् हैं– ''मनस, उच्चतरमनस, प्रदीप्तमनस, स्वानुभूति, अधिमनस और अतिमानस।''[4] इसी क्रम में सच्चिदानन्द की उत्तरोत्तर अभिन्यक्ति इस जगत में होती है। "For each successive level in the descent of the Divine is to man a stage in an ascantion, each vail that hides the unknown God becomes for the God-Lover and God-Seeker an instrument of his unavailing."[5] अर्थात क्योंकि दिव्य के प्रत्येक क्रमिक अवरोहण के स्तर के अनुरूप मनुष्य के लिए आरोहण का एक स्तर है, वह प्रत्येक आवरण जो अज्ञात ईश्वर को छिपाता है, ईश्वर प्रेमी और साधक के लिए उन्के अनावरण का एक साधन है।

श्रीअरविन्द दर्शन में जब हम विकास के द्वारा चैत्यपुरूष का साक्षात्कार कर लेते हैं, तक हम अपने विकास के साथ सृष्टि के विकसित होने पर सचेतन हो जाते हैं, और क्रमशः विश्वात्मा और परम आत्मा को प्राप्त कर लेते हैं। विकास की प्रक्रिया द्वारा हमारी चेतना का पूर्ण रूपान्तरण हो जाता है। श्रीअरविन्द ने मनुष्य के विकास के लिए चैत्तिक, रूपान्तरण, आध्यात्मिक रूपान्तरण, अतिमानसिक रूपान्तरण –इन तीन प्रकार के रूपान्तरण को आवश्यक बताया है। चैत्यपुरूष को जागृत करके आध्यात्मिक रूपान्तरण के द्वारा भागवती शक्ति का आवाहन करते हैं और उनके द्वारा सत्ता की उच्च स्थिति में पहुंचते हैं। चैत्तिक और आध्यात्मिक रूपान्तरण के द्वारा जब दिव्यशक्ति का अवतरण होता है तक निम्न चेतन का आरोहण होता है, तभी अतिमानसीक रूपान्तरण सिद्ध होता हेा। चैत्तिक एवं आध्यात्मिक रूपान्तरण एक तरह से अज्ञान के रूपान्तरण हैं किन्तु अतिमानसिक रूपान्तरण ज्ञान की

अवस्था में होता है। श्रीअरविन्द के अनुसार अतिमानसिक रूपान्तरण पूर्णतः समर्पण एवं ईश्वरीय कृपा के बिना असंभव है। जब पूर्ण समर्पण एवं ईश्वरीय कृपा के द्वारा अतिमानसिक रूपान्तरण होता है, तब समस्त पार्थिव आधार दिव्यभावापन्न उठता है। हम दिव्य चेतना के माध्यम से कार्य करने लगते हैं।

इस प्रकार श्रीअरविन्द दर्शन जड़ तत्व से सच्चिदानन्द तक विकसित होता है। अतिमानसिक चेतना के अवतरण के बाद जागृत चेतना के लिए सम्पूर्ण प्रकृति और जीवन दिव्य हो जाते हैं। यह अज्ञान से मुक्त होकर अमरत्व प्राप्त करती है।

श्रीअरविन्द दर्शन में दैवीकरण की इस प्रक्रिया का संचालन स्रोत स्वयं सच्चिदानन्द है। वही विकास एवं प्रतिविकास के द्वारा अपनी सृष्टि में अपने को अभिव्यक्त करते हैं। परमतत्व सच्चिदानन्द अज्ञान में निमज्जित क्यों होता है? इस प्रश्न की व्याख्या में जैसे कि पहले कहा जा चुका है, वे कहते हैं कि सृष्टि तथा विकास की प्रक्रिया में उसका कोई प्रयोजन नहीं हो सकता। सच्चिदानन्द स्वयं सब कुछ है और पहले से ही सब कुछ सच्चिदानन्द में स्थित है। उन्के लिए असिद्ध एवं अप्राप्य कुछ भी नहीं है। "All is a game are Lila; but a game too carries within itself an object to be accomplished and without the fulfilment of that object would have no completeness of significance."[6] अर्थात् यह सब कुछ उनकी क्रीड़ा या लीला है परन्तु क्रीड़ा भी अपने आप में एाक उद्देश्य की ध्येय रखती है और उस उद्देश्य के पूर्ति के बिना उसकी सार्थकता अधूरी रह जाती है। वही कारण है कि विश्व विकास की प्रक्रिया पूर्वनिर्धारित रहस्य को प्रकट करती है। यहां जड़ भी अतिमानस में परिणत होता है। उनके दर्शन में विकास की यह प्रक्रिया तब तक चलती रहेगी जब तक हम सच्चिदानन्द के साथ पूर्ण तादात्म्य की प्राप्ति न कर ले, और यह तादात्म्य हमें तभी प्राप्त होगा जब हमें सच्चिदानन्द द्वारा अतिमानसिक कृपा की प्राप्ति होगी। यह परमगति ही जीवात्मा की अन्तिम दशा है। समस्त जगत एवं सृष्टि प्रक्रिया का दिव्यता में परिवर्तन मुख्यतः दो बातों पर निर्भर है– नीचे से तैयारी और ऊपर से कृपा। श्रीअरविन्द कहते हैं कि ''हम अपनी तैयारी में कोई कमी न रखे अन्यथा अतिमानस अवतरित होकर भी हमारी तैयारी की कमी के कारण वापस लौट सकता है। अतिमानस को धारण करने की तैयारी यदि पूरी है तो एक बार उसकी कृपा होने से हमारी सम्पूर्ण सत्ता अतिमानसिक प्रकाश से प्रकाशित हो जायेगी।''[7] अतः आवश्यक है कि हम अपने को उस अतिमानसिक स्तर पर पहुंचने योग्य बना ले और यही सारी प्रक्रिया का लक्ष्य भी है कि हम जगत को दिव्यता की कोटि में प्रस्थापित कर दें, और इस लक्ष्य की सिद्धि हेतु अपने पुरूषार्थ के अलावा दैवी कृपा की आवश्यकता नितान्त अनिवार्य है।

उपरोक्त विवेचनाओं के आधार पर कहा जा सकता है कि श्रीअरविन्द के दर्शन में सृष्टि का आविर्भाव दिव्य अवतरण और आरोहण की दोहरी प्रक्रिया है। यह विकास प्रक्रिया जड़ से प्राण, मन होते हुए अतिमानस तक की यात्रा है। इसका अन्तिम लक्ष्य पृथ्वी पर ही दिव्य जीवन की स्थापना करना है।

संदर्भ

1. सिंह, जयदेव. *समकालीन दर्शन.* विकास पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 2000, पृ0 177
2. श्रीअरविन्द, *द लाइफ डिवाइन–1.* आर्य पब्लिशिंग हाउस, पांडिचेरी, 1939, पृ0 52
3. भट्टाचार्य, अभयचन्द. *श्रीअरविन्द दर्शन.* जगबन्धु प्रकाशन, वाराणसी, 1973, पृ0 121
4. वही, पृ0 121
5. श्रीअरविन्द, *द लाइफ डिवाइन–1.* आर्य पब्लिशिंग हाउस, पांडिचेरी, 1939, पृ0 53
6. श्रीअरविन्द, *द लाइफ डिवाइन–2.* आर्य पब्लिशिंग हाउस, पांडिचेरी, 1947, पृ0 – 995
7. भट्टाचार्य, अभयचन्द्र. *श्रीअरविन्द दर्शन,* जगबन्धु प्रकाशन, वाराणसी, 1973, पृ0 131